अध्याय १

# आर्यों का आदिदेश

संस्कृत, भारत की अपनी मूल भाषा है, जिसका 'देववाणी' दूसरा नाम अपनी अति प्राचीनता का द्योतक है। भारत के साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, आध्यात्मिक और राजनीतिक जीवन की पूरी व्याख्या संस्कृत भाषा के वाङ्मय में समाविष्ट है। वेदों के अति गम्भीर एवं रहस्यमय ज्ञान से लेकर सामान्य जन-जीवन के मनोविनोद से संबंधित 'पंचतंत्र' की कथाओं तक जितना भी साहित्य-वैभव विद्यमान है, वह सब संस्कृत-भाषा में ही सुरक्षित है। भारत के उन ज्ञानमना महामनस्वियों के व्यक्तित्व एवं अध्यवसाय का आज हम अन्दाजा नहीं लगा सकते, जिन्होंने ऐसे सहस्रों ग्रन्थों का प्रणयन किया, जिनमें से एक ही ग्रन्थ के आमूल अध्ययन के लिए हमें एक दीर्घायु जीवन की आवश्यकता है।

दुनिया के इतिहासकारों के समक्ष एक बहुत बड़ी जटिल समस्या आदि से ही, बिना समाधान हुए, यह रही है कि जिस बृहद्-वाङ्मय का उत्तराधिकार, जिस बहुमूल्य वसीयत का स्वामित्व आज भारत को उपलब्ध है, उसका मूल अधिकारी कौन था, और भू-मण्डल के किस छोर से उठकर उसने इस भारत भूमि में कब पदार्पण किया ? इस जिज्ञासा का अभी तक अन्तिम रूप से समाधान नहीं हो पाया है और भविष्य में भी इस संबंध में एक सर्वसंमत हल देखने-सुनने को मिलेगा, कदाचित्, इसकी भी सम्भावना कम है। इस संबंध में इतना अवश्य है कि इतिहासकारों की यह बिना समाधान पायी जिज्ञासा ही समय की मोटी परत से विलुप्त सच्चाइयों को खोज निकालने में सदा सक्रिय रही है और भविष्य में भी निरंतर नये अनुसंधानों का कारण बनी रहेगी।

## मनुष्य की जन्मभूमि

भारतीय साहित्य के आदि निर्माताओं को खोज निकालने से पूर्व भारत भूमि को आबाद करने वाली और इस पृथिवी में मानव की प्रतिष्ठा करने वाली आदिम जाति कौन थी, इस जिज्ञासा का समाधान होना आवश्यक है। मनुष्य की मूल जन्म-भूमि को खोज निकालने के लिए इतिहासकारों, पुरातत्त्वज्ञों, भाषा-वैज्ञानिकों और जन-विज्ञान-वेत्ताओं ने अपने-अपने दृष्टिकोण से अलग-अलग मान्यतायें स्थापित की हैं। सीरिया, पश्चिम एशिया, मध्य एशिया, बर्मा, अफ्रीका, उत्तरी ध्रुव, भारत,

Scanned by CamScanner

दक्षिण भारत, पंजाब, कश्मीर और सिंधु के पठारों आदि संसार के विभिन्न भू-भागों को मनुष्य का उत्पत्ति-स्थल सिद्ध किया गया है। विद्वानों का एक वर्ग आदि मनुष्य को लोम-रहित सिद्ध करने के पक्ष में है; एक मत विकासवाद के सिद्धान्त पर आधारित लोम-संयुक्त बंदर को मनुष्य जाति का आविर्भावक मानता है; कोई अस्थि-विज्ञान को आधार मानते हैं और एक सिद्धान्त कृषिसभ्यता के विकास को आधार बनाकर मनुष्य के मूल निवास का समर्थक है।

विद्वानों का एक बहुमत-समर्थित वर्ग मनुष्य की मूल नस्ल को पहचानने के लिए उसकी भाषा, रंग-रूप और छोटाई-ऊँचाई को मान्यता देता है। भाषा-विज्ञान ( Philology ) और जन-विज्ञान ( Anthropology ) इस शास्त्र-द्वय द्वारा वैज्ञानिक वर्गीकरण के आधार पर विद्वानों ने भारतीय जनता की रचना के लिए औष्ट्रिक ( आग्नेय ), द्राविड़ और हिन्द-यूरोपियन ( हिन्द-जर्मन ), इन तीन जातियों को मूल कारण सिद्ध किया है। इस सिद्धान्त के मानने वाले विद्वानों के अनुसार निग्रो से लेकर आर्य जाति तक जितनी भी विभिन्न जातियाँ भारत में प्रविष्ट हुईं, वे सब इन्हीं तीन नस्लों में विलयित हो गईं और इन्हीं सम्मिलित जातियों के द्वारा संस्कृत भाषा का निर्माण हुआ।

कुछ प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर यदि हम थोड़ी देर के लिए इस मन्तव्य को सत्य भी मान लें कि मानव सृष्टि का अभ्युदय भारतभूमि में ही हुआ, तो कदाचित् इस मन्तव्य को स्थायी रूप देने के लिए हम ऐसे समर्थ आधार और प्रामाणिक सामग्री कथंचित् ही पेश कर सकें, जिसको स्वीकार करने में किसी को अड़चन न हो। इस सम्पूर्ण भू-मण्डल के ओर-छोर तक मानव समाज का बिखर जाना इस बात का स्वतः प्रमाण है कि जिस भी दिशा में जिस मानव-समूह को सुख-सुविधायें एवं आवास की अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध हुईं, वहीं वह स्थायी रूप से बस गया। इसके विपरीत जहाँ-जहाँ सुख-सुविधाओं का अभाव होता गया, वहीं-वहीं से वे समूह चलते बने। भारत जैसी शस्य-श्यामला और उर्वर भूमि की स्थायी सुविधाओं को त्यागकर मानव-समूहों का सुदूर देशों को प्रवासित हो जाना युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता है। एतदर्थ हमें इस सत्य को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि मानव जाति का मूल-निवास भारत भूमि में न होकर कहीं अन्यत्र ही था।

भारत के विरोध में ये दलीलें या इन्हीं से मिलती-जुलती कुछ बातें विदेशियों ने बार-बार कही हैं, और उन्हीं का अन्धानुकरण कर थोड़े-से भारतीय विद्वानों ने भी भारत को मनुष्य की जन्म-भूमि मानने में आपत्तियाँ प्रकट की हैं। किन्तु इधर की स्वतन्त्र खोजों से जो-जो नई मान्यताएँ प्रतिष्ठित हुई हैं, वे दिलचस्प होने के साथ-साथ सच्चाई के भी अधिक समीप जान पड़ती हैं।

Scanned by CamScanner

यद्यपि तुलनात्मक भाषा-विज्ञान के आधार पर विद्वानों ने इस संशय का स्पष्टीकरण कर दिया है कि दुनिया की विभिन्न जातियों के साहित्य में सैकड़ों शब्द समानार्थक हैं, जिनको प्राणिशास्त्र और वनस्पतिशास्त्र भी स्वीकार करते हैं;[१] तथापि, इस आधार पर भी यह प्रमाणित नहीं हो पाता है कि मूलतः कौन जाति दूसरी जातियों की जन्मदात्री थी !

## आर्यों के मूल निवास के सम्बन्ध में विभिन्न मत[२]

संसार के सुप्रसिद्ध इतिहासकारों की धारणाएँ इस विषय में एक जैसी नहीं हैं कि आर्य कहे जाने वाले संपूर्ण मानव-समाज का मूल निवास धरती का अमुक भाग था। गाइगर का कथन है कि मध्य-पश्चिम जर्मनी से आर्य समस्त भू-भाग में बिखरे; बेन्फे की धारणा है कि कृष्ण सागर के उत्तरी मैदान से आर्यजाति विभिन्न समूहों में बँटकर धरती भर में बिखरी; गाइल्स आर्यों का आदि निवास आष्ट्रिया, हंगरी तथा बोहेमिया के भू-भाग को सिद्ध करता है, और मैक्समूलर मध्य एशिया को आर्यों की जन्मदात्री भूमि बताता है।

इस संबंध में चार मत प्रमुख हैं; कुछ जर्मन विद्वान् आर्यों का आदि देश जर्मन एवं रूस के बीच; यूरोपियन विद्वान् मध्य एशिया; पारसी विद्वान् ईरान् और भारतीय विद्वान् भारत में सिद्ध करते हैं।

कुछ विद्वानों की राय में आर्यों की आदि भूमि का एक सर्वमान्य हल खोज निकालना कठिन है; किन्तु उनकी दृष्टि में सम्भावित रूप से आर्य मूलतः मध्य एशिया के थे।[३] सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ विद्वान् मैक्समूलर ने 'साइंस आफ दि लैंग्वेज' के समय तक तो आर्यों की आदि भूमि मध्य एशिया को स्वीकार किया; किन्तु अकस्मात् ही उसके बाद उन्होंने अपना मन्तव्य कुछ संशोधन के साथ यों प्रकट किया कि 'जिस प्रकार मैंने ४० वर्ष पूर्व कहा था, उसी प्रकार आज भी कहता हूँ कि आर्यों की जन्मभूमि कहीं एशिया थी।'[४]

---

१. कैंब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, खंड १, पृ० ६६।

२. आइजक टेलरी : दि ओरिजन आफ दि आर्यन्स ( लंदन १८८९ ); जी० चाइल्डे : दि आर्यन्स; ए० सी० दास : ऋग्वैदिक इंडिया ( कलकत्ता १९२७ ); तिलक : आर्क्टिक होम इन दि वेदाज ( पूना १९०३ ), लक्ष्मीधर : दि होम आफ दि आर्यन्स ( दिल्ली १९३० ); पावगी : दि आर्यावर्तिक होम ऐंड दि आर्यन क्रेडल इन दि सप्तसिंधुज; सम्पूर्णानन्द : आर्यों का आदिदेश ( १९९७ वि० )।

३. आई० बी० आई० डी०, पृ० ३२१।

४. गुड वर्ड्स, अगस्त, १८८७।

Scanned by CamScanner

डब्ल्यू ब्रांदेंस्ताइन ( W. Brandenstein ) का एक गवेषणापूर्ण लेख प्रकाशित हुआ था 'Die Crste indogermanesche wande rung' नाम से, जिसका कि कीथ ने अंग्रेजी में संक्षिप्तीकरण किया था। अपने इस वृहद् लेख में ब्रांदेंस्ताइन महोदय ने भाषा की दृष्टि से आद्य-भारतीय यूरोपीय इतिहास को दो भागों में बाँटा था : प्राथमिक-काल और उत्तर-काल। उन्होंने उस लेख में सप्रमाण स्पष्ट किया था कि भारतीय आर्यों का मूल-निवास मध्य-एशिया था। उनके मातानुसार यूराल पर्वतमाला का दक्षिण भाग भारतीय आर्यों की मातृ-भूमि था।[१]

भारत के विपक्ष में विदेशियों को एक आपत्ति यह भी है कि कुछ वैदिक ऋचाओं के उल्लेखानुसार सप्त-सिंधु ( पंजाब ) को यदि आर्यों की आदि भूमि स्वीकार की जाय तो उसमें सबसे पहिले अड़चन यह उपस्थित होती है कि उन्हें सप्त-सिंधु के किनारे किन दस्युओं और निषादों से लड़ाई लड़नी पड़ी थी ? दूसरी बात यह कि ईरान, फारस और यूरोपीय भाषाओं में संस्कृत शब्द कैसे प्रविष्ट हुए ? इस आधार पर उक्त विद्वानों की राय है कि आर्य बाहर से भारत में आये और उसके लिए प्रमाण दिया जा सकता है कि ऋग्वेद में सिंह का तो उल्लेख मिलता है; किन्तु व्याघ्र का नहीं। इसी प्रकार वहाँ मृग-हस्ती का तो वर्णन है; किन्तु हाथी का नहीं। हाथी और व्याघ्र भारत के विशिष्ट जीव हैं जो मध्य-एशिया में नहीं होते। इसलिए निश्चित रूप से आर्यों की मूल भूमि भारत नहीं थी।[२]

इस मत के विपरीत कुछ विद्वानों का अभिमत है कि जब भारतीय आर्यों के किसी भी संस्कृत-ग्रंथ, या किसी भी प्राचीन उल्लेख या किसी भी इतिवृत्त में कहीं भी कोई इस प्रकार की चर्चा नहीं की गई है कि वे किस भू-भाग से भारत में आये, तो, उनके संबंध में एक निश्चित धारणा बना लेना युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता है।[३]

अपने मन से अपनी बातों को कोई भी गलत नहीं कहता है, किन्तु उस सच्चाई की परीक्षा तभी होती है, जब दूसरे लोग भी उसको स्वीकार करें। अनेक विवादास्पद प्रश्न विद्वानों के सामने ऐसे आते गए हैं, जिनके सम्बन्ध में एक सर्वसंमत हल निकालना असंभव-सा हो गया। मनुष्य के मूल निवास की समस्या का प्रश्न भी ऐसा ही जटिल रहा है। इस प्रश्न पर विचार करते हुए बहुत विद्वान् तो स्वार्थवश अपनी हठ पर अन्त तक अड़े रहे; किन्तु ज्यों-ज्यों सच्चाइयाँ खुलती गईं, कुछ विद्वानों को अपनी पूर्वोक्त मान्यताओं में परिवर्तन करना पड़ा।

---

१. इण्डियन हिस्टीरिकल क्वार्टर्ली, कलकत्ता, मार्च १९३७।

२. आई० बी० आई० डी०, पृ० ७९।

३. संस्कृत टेक्स्ट बुक, वाल्यूम २, पृ० ३२३।

Scanned by CamScanner

भारतीय साहित्य की ही भाँति भारतीय निवासियों के इतिवृत्त का वैज्ञानिक अध्ययन पहिले विदेशियों ने आरंभ किया और उनके बाद भारतीयों का ध्यान उधर आकर्षित हुआ। भारतीयों के उस दिशा में आकर्षित होने के पूर्व ही भारत के संबंध में तथा यहाँ के निवासियों के सम्बन्ध में विदेशियों ने जो अनाप-शनाप बातें खोज निकाली थीं, उनका बहुत कुछ निराकरण तभी हो चुका था। भारतीय विद्वानों ने अपने देश तथा अपने साहित्य के संबंध में जब नये सिरे से विचार करना आरंभ किया और फलस्वरूप जो निष्कर्ष निकाले, उनसे भारत के ही नहीं, अपितु विश्व इतिहास पर नया प्रकाश पड़ा।

भारतीयों के आदिम जीवन पर गंभीरतापूर्वक विचार करने वाले विद्वानों में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, नारायण भवनराय पावगी, डा० अविनाशचंद्र दास, पं भगवद्दत्त, पं० रघुनन्दन शर्मा और बाबू संपूर्णानन्द जी का नाम उल्लेखनीय है। इन विद्वानों ने अपनी स्वतंत्र सूझें भारत की परिस्थितियों, वहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों और वहाँ के साहित्य को आधार बनाकर सर्वथा मौलिक रूप में पाठकों के सामने रखीं, अपने प्राक्स्वत्वों के विलुप्त सत्यों और उन पगडंडियों को, जिन पर पड़े हमारे पूर्वजों के पदचिह्न यद्यपि आज धुंधले पड़ गये; किन्तु अपने साक्षात्कृत महान् सत्यों को जिस भारी ज्ञान-विरासत के रूप में वे हमें दे गये, उनको खोज लाने में उक्त विद्वानों की पुस्तकें हमारे लिए मार्ग-निर्देशन का एक बहुत बड़ा जरिया, अथ च, हमारे देश तथा हमारी जाति के संबंध में विदेशियों द्वारा स्थापित दोषपूर्ण अफवाहों को दूर करने के लिए प्रबल आधार सिद्ध हुई हैं। इन पुस्तकों में प्रकट की गई बातें निश्चित ही भारत के सम्बन्ध में दुनिया के विद्वानों को नये सिरे से पुनर्विचार करने को बाध्य करती हैं।[1]

## आर्यों की मूलभूमि : भारत

भारतीय विद्वानों का अभिमत है कि आर्यजाति की मूलभूमि भारत थी और वहीं से उसका विस्तार संसार भर में हुआ। इस मत के पहिले प्रतिष्ठापक स्व० बालगंगाधर तिलक थे, जिनके अनुसार आर्यजाति का मूल निवास उत्तरी ध्रुव था। संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों में कुछ ऐसे प्रामाणिक तथ्य विद्यमान हैं, जिनके अनुसार

१. इन महत्वपूर्ण पुस्तकों के नाम हैं :
तिलक : दि ओरायन तथा आर्क्टिक होम इन दि वेदाज।
पावगी : दि आर्यावर्तिक होम ऐंड दि आर्यन क्रेडल इन दि सप्तसिंधुज।
दास : ऋग्वैदिक इण्डिया।
भगवद्दत्त : भारतवर्ष का बृहद् इतिहास।
शर्मा : वैदिक संपत्ति।
संपूर्णानन्द : आर्यों का आदि देश।

Scanned by CamScanner

विदित होता है कि आरंभ में आर्यजाति विभिन्न कबीलों में विभाजित होकर कंबोज, जावा, सुमात्रा आदि द्वीपों तक विस्तारित थी। सभी कबीले विशुद्ध भारतीय थे; उनमें विदेशी रक्त का लेशमात्र भी संमिश्रण नहीं था।

भारत के सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक जीवन के विधि-व्यवस्थापक महापुरुष मनु ने इस बात का विस्तार से उल्लेख किया है कि भारत की पश्चिमोत्तर सीमा के अन्तर्गत पौण्ड्र, चौड़, द्रविड़, काम्बोज, यवन, शक, पारद, पल्लव, चीन, किरात और खश जातियों का निवास था।[1] ब्राह्मण-ग्रंथ भी इस तथ्य का साक्ष्य प्रकट करते हैं।[2] 'मनुस्मृति' में प्राचीन भारत को ब्रह्मावर्त, ब्रह्मर्षिदेश, मध्यदेश और यहाँ तक कि आर्यदेश आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया है।[3] महर्षि वाल्मीकि ने सुप्रसिद्ध एवं लोकविश्रुत अयोध्या नाम की नगरी का निर्माता मनु को बताया है।[4] इन आधारों पर आर्यजाति का मूल स्थल भारत सिद्ध होता है।

## लोकमान्य तिलक का मत

लोकमान्य बालगंगाधर तिलक का मत बड़े महत्व का है। तिलक ने अपने ग्रंथ 'ओरायन' में आर्यजाति के अभ्युदय और वैदिक साहित्य के निर्माणार्थ जिन गवेषणापूर्ण तथ्यों का दिग्दर्शन किया है, वे अत्यधिक श्रमसाध्य, विचारपूर्ण और अवलोकनीय हैं। उनके प्रमुख सिद्धान्तों का निष्कर्ष इस प्रकार है :

लोकमान्य तिलक उत्तरी ध्रुव के कटिबन्ध प्रदेश को आर्यों की मूल भूमि मानते हैं और ज्योतिष शास्त्र के आधार पर उन्होंने आर्यजाति के उत्कर्ष को तीन विभिन्न युगों में विभाजित किया है। उन तीन युगों का नाम है—१. आदि-युग अर्थात् मृगशीर्ष पूर्वकाल, २. मृगशीर्ष-युग और ३. वसन्तसंपात-युग। आदि युग की अवधि के लिए उन्होंने ६०००–४००० ई० पूर्व का समय निश्चित किया है। इस युग के निर्धारणार्थ उनके आनुमानिक आधार हैं और उनकी मान्यता है कि इस युग तक वैदिक ऋचाओं का निर्माण होना आरंभ नहीं हुआ था। दूसरे मृगशीर्ष-युग की मर्यादा को तिलक ने ४०००-२५०० ई० पूर्व स्थिर किया है और उनकी दृष्टि में इन डेढ़ हजार वर्षों का समय आर्यसभ्यता के महान् उत्कर्ष का समय रहा है। ठीक उन्हीं के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'This is most important period in the history of the Aryan civilization, A good many Suktas in the Regveda'; आर्यजाति के उत्कर्ष का तीसरा वसंतसंपात-युग

---

१. मनुस्मृति १०।४३-४६। २. ऐतरेय ब्राह्मण ७।१८।
३. मनुस्मृति २।१७–२२।
४. अयोध्या नाम तत्रासीन्नगरी लोकविश्रुता।
मनुना मानवेन्द्रेण स्वयत्नेन परिनिर्मिता॥ रामायण ५।२।

Scanned by CamScanner

२५००–१४०० ई० पूर्व है, तिलक के मतानुसार जिस युग में 'तैत्तिरीयसंहिता' और ब्राह्मण-ग्रन्थों की रचना हुई ।[१]

आर्यजाति के अभ्युदय के सम्बन्ध में लोकमान्य तिलक का उक्त सिद्धान्त कुछ दिनों तक अन्तिम निष्कर्ष के रूप में मान्यता प्राप्त करता रहा; किन्तु इधर नई खोजों एवं नये सिद्धान्तों के कारण वह भी उतना मान्य नहीं रहा । उसकी प्रामाणिकता पर विविध विद्वानों ने आपत्ति प्रकट की है[२] । फिर भी कुछ विद्वानों का यही समर्थित मत है कि आर्यों की आदि भूमि भारत ही थी । भारत के विभिन्न भागोंको अपनी-अपनी दृष्टि से विद्वानोंने आर्यों का निवासस्थान निर्धारित किया है ।

## भारत के सम्बन्ध में विभिन्न मत

अल्बरूनी के मतानुसार अतिप्राचीन समय में आर्य लोगों का निवास हिमालय पर था । वहाँ की विपरीत जलवायु के कारण वे पीछे आर्यावर्त्त में आकर बस गये, जहाँ से अनेक जातियों, सम्प्रदायों में विरक्त होकर वे अनेक भू-भागों में बिखर गये ।[३] अपने एक भाषाशास्त्री मित्र को लक्ष्य करके टेलर महोदय ने भी यह स्वीकार किया है कि मनुष्य जाति की जन्मभूमि स्वर्ग-तुल्य कश्मीर थी ।[४] उन्होंने जोर देकर इस बात को कहा कि आर्यों का मूल स्थान वही देश रहा है, जहाँ संस्कृत और जेंद भाषाएँ बोली जाती थीं ।[५]

सुप्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता एवं इतिहासज्ञ विद्वान् बाबू अविनाशचन्द्र दास ने इस संबंध में नई खोज की है । उन्होंने भी टेलर महोदय के अनुसार कश्मीर और सप्तसिन्धु को ही आर्यों का आदि निवास सिद्ध किया : 'That this beautiful mountainous country ( Kashmir ) and the plains of saptasindhu were the cradle of the aryan race,'[६] अविनाश बाबू ने अनेक प्रमाणों को उद्धृत कर इस बात का स्पष्टीकरण किया है कि वेदों में जिन नक्षत्रों का वर्णन है उनका दर्शन ऋषियों ने कश्मीर से ही किया था ।[७]

---

१. तिलक : दि ओरायन, पृ० २०६–२०७, १८९३ ।

२. अविनाशचन्द्र दास : ऋग्वैदिक इण्डिया, पृ० ७; रघुनन्दन शर्मा : वैदिक सम्पत्ति, पृ० ९१–१११ ।

३. अल्बरूनी का भारत ।

४. टेलर : ओरिजन ऑफ दि आर्यन्स, पृ० ९ ।

५. वही, पृ० ३८, ४२, ४३ ।

६. अविनाशचन्द्र दास : ऋग्वैदिक इण्डिया, पृ० ५५ ।

७. वही, पृ० ३७६ ।

Scanned by CamScanner

मेगस्थनीज (४०० ई० पूर्व) का पूरा ग्रंथ संप्रति उपलब्ध नहीं है; किन्तु उसके अवतरण कई ग्रंथों में पाये जाते हैं। इन सब अवतरणों को एकत्र करके पहिले-पहल उनको जर्मन भाषा में प्रकाशित किया गया और बाद में उनका अंग्रेजी अनुवाद हुआ। भारतीय जनजीवन और उसकी प्राचीनतम स्थिति पर प्रकाश डालते हुए मेगस्थनीज ने लिखा है कि भारत अनगिनत जातियों में बसा है। इन जातियों में मूल रूप में कोई भी विदेशी नहीं थी; प्रत्युत स्पष्ट ही सारी ही इसी देश की थीं। भारत के बाहर से आकर कोई भी जाति-संघ यहाँ नहीं बसा है, और न ही भारत ने अपने से भिन्न किसी जाति में कोई उपनिवेश बनाया।[1]

भारत के प्राचीनतम जन-जीवन और उसके आवास-निकास के संबंध में पुरा-तत्त्ववेत्ताओं ने कुछ प्रामाणिक आधार खोज निकाले हैं। उन्होंने उपलब्ध अस्थिपंजरों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि भारत में अति प्राचीन काल से शव-दाह की प्रथा प्रचलित थी। मोहनजोदड़ों से प्राप्त अस्थिपंजरों को उन्होंने पाँच सहस्र वर्ष या उससे पुराना सिद्ध किया है।[2] और साथ ही अब यह भी प्रमाणित हो चुका है कि वयाना एवं स्यालकोट से जो अस्थिपंजर प्राप्त हुए हैं, वे आर्यों के ही थे और उनकी अतिप्राचीनता भी असंदिग्ध है।[3]

इसके साथ-साथ मध्य योरप से प्राचीनतम दाह-संस्कार की प्रथा को चाइल्डे ने केवल २४००-१८०० ई० पूर्व की अवधि के बीच माना है।[4] यूनानियों के संबंध में अल्बरूनी ने लिखा है कि वहाँ भी कभी-कभी मृत-दाह की प्रथा प्रचलित थी; किन्तु उसकी भी अधिकतम प्राचीनता ३००-२०० ई० पूर्व के पहिले न थी।[5]

मैक्समूलर साहब, जो कि अपने मध्यएशियावाद या एशियावाद को बार-बार दुहराते रहे; उन्हें भी अन्त में यह स्वीकार करना पड़ा कि भारत ही एकमात्र ऐसा महान् देश है, मानव जाति ने जिसके सुसंस्कारों का दाय लेकर अपनी सभ्यता, संस्कृति और अपने साहित्य का निर्माण किया। उन्होंने कहा 'हम लोगों ने इस

---

१. It is said that India is peopled by races both numerous and diverse, of which not even one was originally of foreign discent, but all were evidently indigenous, and moreover that India neither received a colony from abroad nor sent out a colony to any other nation.

—एम. क्रिंडल : ऐंश्येंट इण्डिया मेगस्थनीज ऐण्ड आर्यन्स

२. 'मोहनजोदरो ऐण्ड दि इण्डूज सिविलाइजेशन' पृ० ७९-८९, १९३१।

३. प्रि-हिस्टोरिक इण्डिया, पृ० ३७८-३८२, १९२७।

४. बी० जी० चाइल्डे : दि आर्यन्स, पृ० १४५, १९२७।

५. अल्बरूनी का भारत, अध्याय ७३।

Scanned by CamScanner

प्राचीन देश के सम्बन्ध में, जो गोरी जाति का उत्पत्तिस्थान है और जो जगत् की उत्पत्ति का मूल है, सत्य की खोज प्रारम्भ की।'[१] पुनः वे कहते हैं '.....तब तुम परिचित हो जाओगे और तुम्हें लगेगा कि भारत-वसुन्धरा मानवजाति की माता हमारी सारी परम्पराओं की उद्गमभूमि है।[२]

इसी बात को कुछ व्याख्यात्मक ढंग से एम० लुई जैकोलियट यों कहते हैं 'भारत संसार का मूल स्थान है, इस सार्वजनिक माता ने अपनी संतान को नितांत पश्चिम में भेजकर हमारी उत्पत्तिसंबंधी जिज्ञासा को अपने-आप प्रमाणित कर दिया; उसी ने हम लोगों को अपनी भाषा, अपने कानून, अपना चरित्र, अपना साहित्य और अपना धर्म प्रदान किया'।[३]

कुछ विद्वानों के मतों की हम पहिले चर्चा कर चुके हैं, जिनका कथन है कि मानवजाति का मूल स्थान यदि भारत होता तो मनुष्य सुदूर पश्चिम को क्यों-कर जा पाता, इसका सप्रमाण उत्तर हमें प्रो० डान के भौगोलिक अध्ययन पर निकाले गये निष्कर्षों से पूरी तरह मिल जाता है। जेम्स डी० डान ( Jeimes D. Daun ) प्रसिद्ध भू-गर्भवेत्ता विद्वान् हुए हैं। उनका कथन है कि 'प्राच्य' उन्नति का महादेश रहा है। यह बात सारे भूतकालिक प्रमाणों से सिद्ध होती है कि मनुष्य सर्वप्रथम विशाल प्राच्य के किसी भाग में उत्पन्न हुआ होगा, और उसको स्वतः इधर-उधर फैलने तथा आत्मोन्नति के लिये दक्षिण-पश्चिम एशिया की अपेक्षा अधिक उपयुक्त कोई दूसरा स्थान मालूम नहीं पड़ा होगा, क्योंकि भौगोलिक दृष्टि से वही एक ऐसा केन्द्र है, जहाँ से योरप, एशिया तथा अफ्रीका के तीन विशाल विभाग निश्चित होते हैं।'[४]

इस संबंध में क्रूजर साहब का मत भी ध्यान देने योग्य है, जिसको कि पावगी जी ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है। क्रूजर साहब का मंतव्य है कि 'यदि पृथ्वी पर ऐसा कोई देश है, जो मानवजाति का मूल स्थान या कम-से-कम आदिम सभ्यता का लीलाक्षेत्र होने का दावा न्यायतः रखता है, और जिसकी वे समुन्नतियाँ, और उससे भी परे, जिसकी विद्या की वे न्यामतें, जो मनुष्यजाति का दूसरा जीवन है, प्राचीन जगत् के सम्पूर्ण भागों में पहुँचायी गयी हैं; तो वह देश निःसन्देह भारत ही है।'[५]

---

१. मैक्समूलर : इण्डिया : ह्वाट इट कैन टीच अस, पृ० १७८।

२. वही, पृ० १७।

३. जैकोलियट : दि जर्नल आफ दि रायल एशियाटिक सोसाइटी, वाल्यूम १६, पृ० ७।

४. डान : आई. बी. आई. डी., पृ० ५८५, ५८६।

५. पावगी : दि आर्यावर्तिक होम ऐण्ड दि आर्यन क्रेडल इन दि सप्तसिंधुज ( हिन्दी अनुवाद ) पृ० ७३।

Scanned by CamScanner

लोकमान्य तिलक के आर्यदेश 'उत्तरी ध्रुव' वाले सिद्धान्त पर बाद में यद्यपि बहुत आपत्तियाँ प्रकट की गईं; किन्तु उसका समर्थन भी कुछ कम नहीं हुआ। आज भी, जब कि इस सम्बन्ध में नये तथ्य प्रकाश में आ चुके हैं, लोकमान्य की स्थापनाएँ सहसा भुलाई जाने योग्य नहीं हैं। उत्तरी ध्रुव को मनुष्यजाति की जन्मभूमि सिद्ध करनेवाले विद्वानों में एम० डी० सपोरटा का नाम प्रमुख है, और यद्यपि इनके विचारों का प्रो० रे ( Rhy ) ने भरपूर खण्डन करने का यत्न किया[१], तथापि सुप्रसिद्ध भू-गर्भवेत्ता विद्वान् मेडलीकट एवं ब्लैन्फर्ड[२], डा० डान[३], डा० इसाक टेलर[४] और दूसरे विद्वानों[५] ने यही स्वीकार किया कि उत्तरी ध्रुव तथा सप्तसिन्धु ही आर्यों का आदि देश था।

## सप्तसिन्धुवाद

भारतीय पक्ष को लेकर आर्यों के मूल स्थान के सम्बन्ध में सप्तसिन्धुवाद का बोलबाला अनेक विद्वान् करते आ रहे थे; किन्तु उसके लिए समर्थ दलीलें और व्यापकता से उसकी मौलिक गवेषणाएँ प्रस्तुत करने वाले विद्वानों में नारायण भवन-राय पावगी का नाम पहिले आता है। इस प्रसंग में उन्होंने लोकमान्य तिलक की कुछ बातों का और विशेषतः यूरोपीय विद्वानों के मतों का आमूल खण्डन किया। जेम्स डी० डान, एस० मेडलीकट, ब्लैन्फर्ड, प्रो० जड, डा० नोइटलिंग, डा० कार्ल ए० रेडलिच, प्रो० लापवर्थ आदि भू-गर्भ-वेत्ता प्रकांड विद्वानों द्वारा वर्षों की गम्भीर खोजों के फलस्वरूप निकाले गए निष्कर्षों और वेदमन्त्रों एवं वैदिक साहित्य में सुरक्षित तत्सम्बन्धी स्थलों को प्रमाण रूप में उद्धृत कर पावगीजी ने आर्यों के मूल निवास के सम्बन्ध में अपने सर्वथा नये विचार प्रकट किये।[६]

उनका कथन है कि महाहिमयुग के समय, जब जलप्लावन ने उत्तरी ध्रुव देशों को आप्लावित कर लिया था, और वहाँ की भूमि को हिम तथा तुषार की मोटी-

---

१. रे : हिब्बर्त लिटरेचर ( Hibbert Literature ), पृ० ६३१-६३३।
२. मेडलीकट ब्लैन्फर्ड : मेनुअल आफ जेयोलॉजी आफ इण्डिया, पृ० २२।
३. डा० डान : मेनुअल आफ जेयोलॉजी, पृ० ३८५ ( १८६३ )।
४. डा० टेलर : दि ओरिजन आफ दि आर्यन्स, पृ० २०१ (द्वितीय संस्करण)।
५. ऍन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, वाल्यूम १०, पृ० ३६९ ( नवाँ संस्करण )।
६. पावगीजी ने मराठी में एक पुस्तक लिखी थी : 'सप्तसिन्धु या प्रांत अथवा आर्यावर्त्तांतील आमची जन्मभूमि आणि उत्तरध्रुवाकडील आमच्या वसाहती' नाम से, जिसका उन्होंने अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित किया : 'दि आर्यावर्त्तिक होम ऐण्ड आर्यन क्रेडल इन दि सप्तसिन्धुज'। पं० देवीदत्त शुक्ल ने उसका हिन्दी अनुवाद किया है; किन्तु यह अनुवाद अशुद्धियों से भरपूर है।

Scanned by CamScanner

मोटी परतों के नीचे दबा लिया था, तब हमारे तृतीयकालीन पूर्वपुरुष आर्यावर्त की ओर, हिमालय के ही मार्ग से लौटने को बाध्य हुए थे। वे लोग सप्तसिन्धव देश के अपने मूल स्थान से वहाँ गये थे और उन अत्यन्त दूरस्थ भागों में बसकर उन्होंने उन भागों को आबाद किया था। यही कारण है कि हम इस विलक्षण हिमालय पर्वतमाला को महान् जलप्लावन के वर्णनों के साथ सप्तसिन्धव देश की उत्तरी सीमा के रूप में, बहुलता से वैदिक ग्रन्थों और ब्राह्मण ग्रन्थों में उल्लिखित पाते हैं, जिसकी प्राचीनता २५०० ई० पूर्व से भी पहिले बैठती है[१]।

**समीक्षा**

वैदिक साहित्य की अधिकतम आयु २५००-३००० ई० पूर्व के भीतर है[२], लोकमान्य तिलक के 'ओरायन' तथा 'दि आर्क्टिक होम इन दि वेदाज' इन दो ग्रंथों की चर्चा करते हुए, वेदों के आन्तरिक साक्ष्यों के आधार पर, जिनकी ओर कि विदेशियों ने ध्यान तक नहीं दिया, यह सिद्ध किया है कि 'सिन्धु' शब्द समुद्रवाची और नदीवाची दोनों है। वेदोक्त 'सप्तसिंधव' शब्द का आधार भी यही 'सिन्धु' शब्द है। पाश्चात्यों के कथनानुसार क्योंकि आर्य मध्य-एशिया से भारत आये थे, अतएव वे समुद्र से अपरिचित थे इसलिए सिन्धु शब्द से उन्होंने सर्वत्र नदी को ही लिया है। किन्तु ऋग्वेद के कुछ मंत्रों को पढ़कर यह विदित हो जाता है कि आर्य समुद्र से सुपरिचित थे[3], एवं उनके संबंध में विदेशियों की उक्त धारणाएँ उनकी अज्ञानता की परिचायिका हैं।

अपने एक निबन्ध में बाबू संपूर्णानन्दजी ने लोकमान्य के सिद्धान्तों, उनकी सूझ-बूझ एवं उनकी ज्योतिष गणना के अनुसार वसन्त-संपात मार्गशीर्ष में होना स्वीकार किया है। लोकमान्य के मतानुसार मार्गशीर्ष महीने का यह वसन्त-संपात का समय ज्योतिष के आधार पर आज से १७,००० वर्ष पहले बैठता है।[४]

श्री क० मा० मुन्शी ने भी अपने एक 'भगवान् परशुराम' शीर्षक लेख में बताया है कि सप्तसिन्धु आर्यावर्त्त का ही दूसरा नाम था; क्योंकि उसमें सात

---

१. पावगी : 'दि वैदिक फादर्स आफ जेयोलॉजी', पृ० ७२ (ए) १४९, १५५; उन्हीं का 'दि आर्यावर्त्तिक होम ऐण्ड दि आर्यन क्रेडल इन दि सप्तसिन्धुज', पृ० २४-२५ तथा तिलक : 'आर्क्टिक होम इन दि वेदाज, प्रफेस', पृ० १।

२. कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, वाल्यूम १, पृ० ७०, १९२२।

३. ऋग्वेद १।११६ ३-५; ऋग्वेद के नदीसूक्त ( मण्डल १० सू० ७५ ) पर विस्तृत समीक्षा के लिए देखिए-वैद्य : हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर, पृ० ९०।

४. नवनीत, सितम्बर १९५६।

Scanned by CamScanner

नदियाँ बहती थीं और उसकी सीमा वर्तमान काबुल से लेकर दिल्ली तक फैली हुई थी।[1]

कुछ लोगों ने पौराणिक आख्यानों या वंशावलियों के आधार पर वैदिक युग का संभावित काल २००० ई० पूर्व या उससे भी अधिक पीछे का माना है। वे स्वभावतया भारत में आर्यों के आवागमन या आक्रमण की कालगणना के लिए इतनी प्राचीन तिथियों को मानने से इनकार करेंगे; किन्तु 'पौराणिक परंपराओं का बहुत-सा भाग अत्यन्त प्राचीन हो भी सकता है, परन्तु उनके आधार पर आर्यों के आक्रमण-काल को अत्यन्त प्राचीन गिनना सर्वथा असंगत होगा, क्योंकि पौराणिक परम्पराओं के पूर्वार्धकाल के अनार्य द्रविड़ (तथा दक्षिणदेशीय) राजाओं और वंशों से संबन्धित होना केवल सम्भव ही नहीं, नितान्त विश्वसनीय भी हो सकता है।'[2]

कुछ विद्वानों का कहना है कि वैदिक आर्य जिस रीति से भारत में प्रविष्ट हुए, उसका कहीं भी कोई उल्लेख उनके प्राचीनतम साहित्य में उपलब्ध नहीं होता है।[3] इन विद्वानों की ये धारणाएँ, भारतीय साहित्य तथा वेदों के प्रति उनके अधूरे ज्ञान की परिचायिका हैं[4]। ऋग्वेद के वसिष्ठ सूक्त में तृत्सु-वंशीय राजा सुदास के साथ जिन आर्य और अनार्य जातियों का युद्ध हुआ था, उनके नाम हैं: तुर्वश, मत्स्य, भृगु, द्रुह्यु, पक्थ, मलान, अलिन, शिव, विषणिन्, वैकरण, अनु, अज, शिग्रु और यशु।[5] ऋग्वेद के इस विवरण से विदित होता है कि ऋग्वेद के निर्माण से भी पहिले एशिया माइनर की कुछ जातियाँ आर्य-समूहों के साथ ही भारत में प्रविष्ट हो चुकी थीं। इन आर्य-जातियों से उत्पन्न अर्धु, पुण्ड्र, शबर, पुलिन्द और मूतिव आदि आधुनिक जातियाँ विश्वमित्र की सन्तानें कही गई हैं[6]।

डा० कीथ ने अपने एक पाण्डित्यपूर्ण व्याख्यान में अनेक प्रामाणिक आधारों के बल पर यह सिद्ध किया है कि मानवजाति की जन्मभूमि उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त

---

१. भारती, बम्बई, सितम्बर ९, १९५६।

२. डा० सुनीत कुमार चाटुर्ज्या : भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी, पृ० ५७।

३. आई. बी. आई. डी., पृ० ७९।

४. विस्तार के लिए देखिए—वैद्य : हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर वैदिक पीरियड तथा उन्हीं का 'वेद में प्राचीन आर्य निवास' शीर्षक लेख, गंगा, वेदांक, प्रवाह २, तरंग १, पृ० १६३; रुद्रदेव शास्त्री : 'वेद में आर्यों का आदि निवास' लेख उक्त अंक में, पृ० १६६।

५. ऋग्वेद ७।१८।

६. ऐतरेय ब्राह्मण ७।१।८।

Scanned by CamScanner

थी। उनके इस व्याख्यान पर बाद में कई दिनों तक बड़ी चर्चाएँ हुईं।[1] इसी प्रकार जे० बी० हालडेन ने भी अपने एक व्याख्यान में मानवजाति की उत्पत्ति के लिए पृथ्वी के विभिन्न चार केन्द्रस्थल सिद्ध किये, जिनमें से पंजाब और मध्य अफगानिस्तान को भी उन्होंने मानवजाति की उत्पत्ति का एक केन्द्र माना है। हालडेन साहब के मतानुसार इन विभिन्न केन्द्रों में मनुष्य जाति के विभिन्न तरीकों का अलग-अलग रूप से विकास हुआ।[2]

डा० अविनाशचन्द्र दास ने आर्य भूमि की भौगोलिक स्थिति के विश्लेषण पर एक बृहद् निबन्ध लिखा : 'ऋग्वेदोक्त आर्यनिवास का भौगोलिक विवरण'। अपने इस निबन्ध में डा० दास ने स्पष्ट किया कि ऋग्वेद संहिता के निर्माणकाल में आर्यगण पंचनद, काश्मीर, बाह्लीक, गांधार ( अफगानिस्तान ), उत्तरी बिलोचिस्तान और पश्चिम हिमालय प्रभृति प्रदेशों में पूर्णतया बस चुके थे और यही प्रदेश आर्यों का आदि निवास था। इन्हीं आर्यों की एक शाखा धार्मिक मतभेद के कारण ईरान में जाकर बसने लगी थी। डा० साहब ने यह भी प्रकट किया कि सप्तसिन्धु वही भाग था, फ़ारसियों के धर्मग्रंथ 'अवेस्ता' में जिसको सप्तहिन्द कहा गया है। उस समय आर्य-भूमि के चारों ओर चार समुद्र थे, सप्तसिन्धु, अर्थात् सात नदियों की भाँति किन्हीं प्राकृतिक कारणों से संप्रति विलुप्त हो चुके हैं। डा० साहब ने आर्यों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बताया कि 'मेरे विचार में ऐसा जँचता है कि पंजाब और गांधार में ही आर्यों की उत्पत्ति हुई थी, एवं यही प्रदेश इनका आदि उत्पत्ति-स्थल ( Cradle ) है। सृष्टिकाल में आर्यजाति यहीं बसती थी, पीछे भिन्न भिन्न प्रदेशों में फैली।'[3]

डा० अविनाशचन्द्र दास के बाद बाबू सम्पूर्णानन्दजी ने इस विषय पर एक बड़े महत्त्व की पुस्तक लिखी है। उन्होंने भी यही सिद्ध किया है कि आर्यों का आदि देश सप्तसिन्धव था। रंग, रूप, वाणी, विद्या, विचार और आकार-प्रकार से मनुष्य भले ही असमान दीख पड़ें; किन्तु प्रकृत्या वे अभिन्न हैं, क्योंकि उनकी स्थायी वंश-परम्परा एक जैसे ढंग से चली है। इसलिए हमारे समक्ष प्रश्न यह उठता है कि क्या सभी मनुष्यों का पूर्वज एक ही था, या कि भिन्न-भिन्न थे? इसकी जगह यह भी कहा जा सकता है कि आरम्भ में मनुष्यजाति किसी एक देश या एक स्थल में पैदा होकर सारे भू-मण्डल में फैली अथवा एक ही साथ संसार के विभिन्न छोरों में मनुष्य अलग-अलग पैदा हुए?

---

१. ऋग्वैदिक कल्चर, पृ० ११६।

२. दि स्टेट्समैन कलकत्ता, २२.२.३१।

३. गंगा, पुरातत्त्वांक, जनवरी १९३३।

Scanned by CamScanner

इसका एक सर्वसम्मत उत्तर देना कठिन है। इस सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है कि यदि मनुष्य की जन्म-भूमि किसी एक स्थान में रही हो तो, उसको फैले आज लाखों नहीं तो सहस्राब्दियाँ अवश्य ही बीत गईं।[1] पृथ्वी पर कई बार भौगोलिक उपद्रव हुए, ऋतु-विपर्यय हुआ। जहाँ आज ठंड है वहाँ गर्मी थी; जहाँ आज गर्मी है वहाँ बर्फ जमी थी। इतना ही नहीं, जहाँ आज समुद्र है वहाँ स्थल-भाग था और आज के स्थल-भाग में तब समुद्र था। इस दृष्टि से विभिन्न भू-भागों में मनुष्य-जाति का यह विकेन्द्रीकरण ४०-५० हजार वर्ष पहिले हो चुका था, क्योंकि १०-१२ हजार वर्ष तो उपजातियों को बने ही हो गए हैं।[2]

मनुष्य जब एक स्थान में रहकर अपना निर्माण कर रहा था, तब उसका एक ही समूह था। जब मूल मनुष्यजाति के फिरके विभिन्न भू-भागों में फैले तो वे अनेक उपजातियों में विभक्त हो गये। ये उपजातियाँ कितनी थीं, इसके सम्बन्ध में एक जैसी बातें देखने को नहीं मिलती हैं। उनकी संख्या तीन से लेकर डेढ़ सौ तक गिनाई गई हैं।[3] आर्य, सेमेटिक, मंगोल और हब्शी आदि भी उन्हीं आदिम उप-जातियों में से थीं। इन उपजातियों में विद्वेष की भावना जन्मतः ही थी। वैदिक युग में जब सर्वप्रथम सप्तसिन्धु (पंजाब) की सीमा पर आर्यों का सामना अनार्यों से हुआ तो दोनों उपजातियों में लड़ाई ठन गई। आर्यों के बहुत यत्न करने पर भी बहुसंख्यक अनार्य सर्वथा नष्ट न हो सके; किन्तु आर्यों ने अनार्यों का एकदम बहिष्कार कर दिया; उन्हें विवाह, सहभोज आदि में शामिल नहीं होने दिया।

त्रेता युग में आर्य जब विन्ध्य को लाँघकर दक्षिण में प्रविष्ट हुए तो वहाँ भी अनार्यों से उनका सामना हुआ। यद्यपि तब तक वे अनार्य भी काफी सभ्य और संस्कृत हो चुके थे; किन्तु तब भी आर्य उन्हें मनुष्य मानने को तैयार न हुए। उनमें से कुछ ने अनेक अपमानों के बावजूद भी आर्यों का साथ दिया, कुछ ने नहीं भी दिया। जिन्होंने साथ दिया वे आर्यों की भाषा में वानर कहलाये और जिन्होंने शत्रुता रची, वे राक्षस कहलाये। इन वानरों और राक्षसों के सम्बन्ध में जैसा भी पढ़ने-सुनने को हमें मिलता है, उससे हमें यही पता चलता है कि वे भी मनुष्य थे, जो कि तत्कालीन सत्ताधारी जाति के अनुकूल न रहने के कारण वानर या राक्षस कहलाए।[4]

## आर्य कौन थे ?

मूल मनुष्य जाति अनेक उपजातियों में विभक्त तो हुई, किन्तु उनमें आर्य उप-जाति कौन थी, यह बात विचारणीय है। अनेक मतभेदों के बावजूद अन्ततः यह

१. डॉ० सम्पूर्णानन्द : आर्यों का आदि देश, पृ० ३-४; लीडर प्रेस, प्रयाग, १९९७ वि०।

२. वही, पृ० १४। ३. वही, पृ० ७। ४. वही, पृ० १०।

Scanned by CamScanner

बात बहुमत से स्वीकार की गई कि आर्यजन वही थे, जो वेदकालीन भारत के निवासियों और प्राचीन पारसियों ( ईरानियों ) के पूर्वज थे। साथ ही यह भी सिद्ध हो चुका है कि पश्चिमी यूरोप के बहुसंख्यक अधिवासी अफ्रीका की प्रवासित आदिम उपजाति की सन्तानें हैं। आर्य उपजाति की दो शाखाओं में, एक का सम्बन्ध भारत और दूसरी का ईरान से था। मूलतः ये दोनों अभिन्न थीं।[१]

## मध्य-एशियावाद का खण्डन

बाबू सम्पूर्णानन्दजी ने क्यूनों तथा मैक्समूलर आदि विद्वानों की सम्भावनाओं से विपरीत, कि आर्यजाति का मूल निवास यूरोप के उत्तरी भाग यूराल तथा मध्य एशिया में कहीं था, अपना अभिमत दिया है कि आर्यों का मूल निवास सप्तसिन्धव था। उनके मतानुसार वेद और अवेस्ता के निर्माणक लोगों का बहुत दिनों तक साथ ही नहीं रहा, वरन्, उनका इतिहास भी एक ही था। उनका आदिम स्थान किसी ऐसी जगह रहा, जो संस्कृत और जेंद भाषा-भाषी लोगों के अधिक निकट था। इसी जगह से मनुष्यों का एक फिरका (शाखा) ईरान, एक भारत और एक पश्चिम गया। बाबू सम्पूर्णानन्दजी ने जेंद अवेस्ता और वैदिक संहिताओं में वर्णित भौगोलिक सीमाओं सम्बन्धी और खान-पान, आचार-विचार, रहन-सहन सभ्यता-संस्कृति-सम्बन्धी बातों की छान-बीन करके यह सिद्ध किया कि सिन्धु नदी से सरस्वती नदी के बीच का भाग, जिसमें काबुल, गन्धार, काश्मीर, पंजाब आदि सम्मिलित हैं, सप्तसिन्धव ही उनका मूल घर था।[२]

## सप्तसिन्धव

सप्तसिन्धव देश की सात नदियों के नाम थे : सिन्धु, विपाशा (व्यास), शुतुद्रि या शतद्रु (सतलज), वितस्ता (झेलम), असिक्नी ( चुनाव ), परुष्णी ( रावी ) और सरस्वती। इनके अतिरिक्त उस प्रदेश में दृषद्वती, तृष्टामा, सुसर्तु, रसा, श्वेती, कुम्भा गोमती, मेहत्नु और क्रुमु आदि और भी नदियाँ थीं, किन्तु ये सभी नदियाँ उक्त सप्त नदियों में ही विलयित हो जाती थीं। अतः प्रधानता वहाँ सात ही नदियों की रही। इसीलिए उस प्रदेश का नाम सप्तसिन्धव पड़ा।[३] आर्यावर्त का वह भू-भाग, जिसमें पंजाब की नदियाँ बहती थीं और जो सिन्धु तथा सरस्वती के बीच में स्थित था, ऋग्वेद में 'देवनिर्मित देश' कहा गया है[४]। यह देश यागप्रेमी आर्यों का देश था।[५] सप्तसिन्धव वही प्रदेश था, जिसे आजकल पंजाब-काश्मीर कहा जाता है।

सप्तसिंधु की यह पवित्र भूमि आर्यों को बहुत ही पसंद थी। वेदों में और

---

१. वही, पृ० २६-२७। २. वही, पृ० ३०-३३।
३. वही, पृ० ३८। ४. ऋग्वेद:३।३३।४।
५. ऋग्वेद, ६।६१।९।

Scanned by CamScanner

विशेषतया ऋग्वेद[१] में तथा जेंद अवेस्ता[२] में उसकी पावन महिमा का विस्तार से वर्णन है।

इसके अतिरिक्त डॉ० गंगानाथ झा ने ब्रह्मर्षि देश, डॉ० एस० त्रिवेद ने देविका नदी के तट पर मुलतान, श्री एल०डी० कल्ला ने हिमालय की उपत्यका तथा कश्मीर, बाबू सम्पूर्णानन्द ने डॉ० दास के मतानुसार काश्मीर या पंजाब और डॉ० राजबली पांडेय ने मध्यप्रदेश (उत्तरप्रदेश-विहार) को आर्य जाति के उद्भव एवं प्रसार की मूल भूमि माना है।

## आर्य और अनार्य

वैदिक साहित्य और संस्कृति के निर्माता तथा वाहक आर्यों और अनार्यों का वेदों, वैदिक-साहित्य, पुराणों तथा महाकाव्यों में सर्वत्र व्यापक रूप में उल्लेख हुआ है।

वेद और वैदिक साहित्य का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि सर्वत्र ही 'आर्य' शब्द जाति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। 'शतपथ ब्राह्मण'[३] में आर्य जाति के अन्तर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णों की गणना की गयी है। 'आर्य' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में हुआ है।[४] उन्हें ऋग्वेद[५] तथा अथर्ववेद[६] में दासों तथा शूद्रों का विरोधी कहा गया है। इस दृष्टि से आर्य जाति के अन्तर्गत शूद्रों की गणना नहीं की गयी है। कहीं-कहीं 'आर्य' शब्द केवल 'वैश्यों' के लिये प्रयुक्त हुआ है किन्तु यह सांकेतिक है और इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। 'ऐतरेय आरण्यक,[७] और शांख्यायन आरण्यक,[८] में आर्यों की बोली (वाच्) की विशेष चर्चा की गयी है।

अथर्ववेद में 'शूद्रार्यौ' शब्द का प्रयोग हुआ है, जो शूद्र और आर्य का द्योतक है

---

१. ऋग्वेद : १।३२।३ ; १।३३।११-१२, ३।१०।७५; १।३।११; ६।६१।२; ६।६१।१२ ; ७।९५।४।

२. जेंद अवेस्ता के उद्धरण : आर्यों का आदि देश, पृ० ४७-५३; विशेष : बाबू संपूर्णानन्दजी की पुस्तक की अपेक्षा पावगीजी की पुस्तक में वेदों और अवेस्ता के प्रमाण विस्तार से दिये गये हैं। देखिये : वैदिक प्रमाणों के लिए पृ० ७६-१२१, आवेस्तिक प्रमाणों के लिये पृ. १४६-१६६।

३. शतपथ ब्राह्मण (काण्व शाखा) ४।१।६

४. ऋग्वेद १।५१।८; १३०।८; १५६।५ आदि।

५. ऋग्वेद ६।२०।१०; २५।१।२ आदि।

६. अथर्ववेद ४।२०।४, ८।

७. ऐतरेय आरण्यक ३।२।५। ८. शांखायन आरण्यक ८।९।

Scanned by CamScanner

और शूद्र तथा आर्य का युद्ध ब्राह्मण तथा शूद्र के बीच का युद्ध माना गया है।[1] इससे भी शूद्रों और आर्यों की भिन्नता का बोध होता है।

उक्त प्रयोग के अतिरिक्त 'आर्य' शब्द का बहुधा आर्य-वर्गों (विशः)[2] नामों (धीमन्)[3] वर्णों ( वर्ण )[4] अथवा आस (धामन्)[5] आदि के विशेषणों के अर्थ में भी उल्लेख हुआ है। आर्य शब्द के इन सभी अर्थों का एक ही जाति में समन्वय हो जाता है।

आर्य तथा अनार्य जातियों का उल्लेख परवर्ती साहित्य में भी प्रचुरता से हुआ है। [6]'महाभारत' में वेदशास्त्रोक्त साधु आचारों का पालन करने वाले को 'आर्य' और उनके विपरीत आचरण करने वाले को 'अनार्य' कहा गया है। सदाचारों का आचरण और उनका अनाचरण ही आर्यत्व और अनार्यत्व ( अनार्यत्वमनाचारः ) की पहचान थी। यहाँ तक कहा गया है कि अनार्यों के कार्यों का विद्वान् व्यक्तियों में आचरण नहीं करना चाहिए।[7]

इस तरह 'महाभारत' के उक्त उल्लेख से ज्ञात होता है कि आर्यत्व-अनार्यत्व अब ( महाभारत काल में ) जातिगत नहीं अपितु कर्मगत हो गया था। 'आर्य' शब्द श्रेष्ठ कर्म का और 'अनार्य' शब्द हीनकर्म ( अनाचार ) का द्योतक माना जाने लगा था। इसी आधार पर आर्य उपजातियों के अनेक लोग अनार्य और अनार्य जाति के अनेक लोग आर्यों की श्रेणी में परिवर्तित हो गये थे।

'महाभारत' की ही भाँति रामायण में भी 'आर्य' सम्बोधन आदर्श, मर्यादा, सत्य, शील और उच्चकोटि की नैतिकता के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। देवत्व की श्रेणी प्राप्त करने के लिए आर्यत्व का होना आवश्यक बताया गया है। 'आर्य' शब्द केवल आर्थिक एवं आध्यात्मिक उच्चता का ही द्योतन नहीं करता था; अपितु उसे राष्ट्रीय गौरव का भी प्रतीक माना जाता था। सब के लिए 'आर्य' सम्बोधन नहीं किया जाता था। जिसे आर्य होने का गौरव दिया जाता था, उसे अपने राष्ट्रीय स्वाभिमान की रक्षा करनी आवश्यक होती थी।

इस प्रकार ऐसा ज्ञात होता है कि युगानुरूप आर्य-अनार्य शब्दों के प्रयोग एवं व्यवहार में विचारों का परिवर्तन होता गया। 'आर्य' शब्द आज जिस रूप में प्रचलित है उसके उस अर्थ या आशय को प्रमाणित करने के लिए किसी प्राचीन सन्दर्भ को उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है। स्पष्ट है कि उसका प्रचलन ऐसी समृद्ध, संस्कृत, उन्नत एवं प्रभावशाली जाति के लिए हुआ है, जिसका इस महान् राष्ट्र की रचना में सर्वाधिक योगदान रहा।

---

१. अथर्ववेद १९।३२।८ आदि। २. ऋग्वेद १।७७।३ आदि।
३. वही १०।४९।३ ४. वही ३।३४।४। ५. वही ९।६३।१४।
६. महाभारत, अनु० ४८।४१। ७. महाभारत शान्ति, ९३।१६;९४।१०।



Scanned by CamScanner

## आर्य-अनार्य जातियों के समन्वयवादी दृष्टिकोण के उपादान

वेद भारतीय संस्कृति के दिव्य ज्ञान-ग्रन्थ हैं, और आज, संसार का प्रत्येक विद्वान् बिना सोच-संकोच किए यह मान बैठा है कि भारत के इन अति प्राचीन ज्ञान-ग्रन्थों में विश्व-सभ्यता के आदि सूत्र विद्यमान हैं। भारत की सार्वजनीन संस्कृति के बारे में विचार करते हुए हमारा पहिला ध्यान वेदों की ओर जाता है, और हमें लगता है कि वेदों में मानव जाति की वे अति प्राचीन समन्वयवादी विचारधाराएँ समाविष्ट हैं जिनसे सिद्ध होता है कि धरती का समग्र जन-जीवन एक ही परिवार; एक ही कबीले के द्वारा प्रसूत और प्रसारित हुआ है।

यद्यपि आज हमारे सम्मुख कुछ ऐसी परिवर्तित परिस्थितियाँ विद्यमान हैं, जिनका इतिहास बताने में वेद भी मौन हैं और यद्यपि वेदों में वे बहुत सारी बातें, जो आचार-विचार, धर्म-कर्म एवं सभ्यता-संस्कृति के श्रेत्र में बरती जा रही हैं, कहीं भी नहीं मिलतीं, फिर भी वेदों की अधिकांश बातें युग के अनुरूप हैं। वे बहुत सारी वैवाहिक सम्बन्धों की बातें, जिनका धर्म-ग्रन्थों ने भरपूर विरोध किया, महाभारत-युग में अतिक्रान्त हो गईं और अनुलोम-प्रतिलोम, सवर्ण-असवर्ण एवं आर्य-अनार्य का भेद मिटकर वैदिक युग से लेकर मुसलमानी आक्रमण के पूर्व जितनी भी औष्ट्रिक (आग्नेय), निग्रो, तिब्बती, बर्मी, मंगोल, यूनानी, शक, आभीर, युची, हूण और तुर्क आदि जातियाँ भारत-भूमि में प्रविष्ट हुईं, वे सब आर्यों के साथ एक होकर 'हिन्दू' शब्द के अन्तर्गत समा गईं।

आर्य जाति के साथ दूसरी जातियों के समागम और समन्वय से अपने आप उन बातों का निराकरण हो जाता है, जो हमें वेदों में नहीं मिलतीं। निश्चित ही उन रीति-रिवाजों एवं आचार-विचारों का आविर्भाव आर्य और आर्येतर उक्त जातियों के मेल से हुआ। हिन्दू धर्म और हिन्दू-संस्कृति का आज जो रूप है, उसके भीतर प्रधानता उन बातों की नहीं है, जो ऋग्वेद में लिखी मिलती हैं, बल्कि हमारे समाज की बहुत रीतियाँ और हमारे धर्म के बहुत से अनुष्ठान ऐसे हैं; जिनका उल्लेख वेदों में नहीं मिलता है और जिन बातों का उल्लेख वेदों में नहीं मिलता है उनके बारे में विद्वानों का मत है कि या तो वे आर्येतर सभ्यता की देन हैं, अथवा उनका विकास आर्यों के आने के बाद, आर्य और आर्येतर संस्कृतियों के मेल से हुआ है।[1]

हिन्दू-संस्कृति के मूल उपादान अनार्य लोगों के सम्बन्ध में सुनिति बाबू का कथन है कि "संक्षेप में, कर्म तथा परलोक के सिद्धान्त; योग-साधना, शिव, देवी तथा विष्णु के रूप में परमात्मा को मानना; वैदिक 'हवन'-पद्धति के समक्ष नई 'पूजा'-रीति का हिन्दुओं में आना आदि तथा अन्य भी बहुत सी वस्तुओं का हिन्दू

१. रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ४८-४९ (१९५६ ई०)।

Scanned by CamScanner

धर्म और विचार में आना ; वास्तव में अनार्यों की देन है। बहुत सी पौराणिक तथा महाकाव्यों में आई हुई कथाएँ, उपाख्यान और अर्ध-ऐतिहासिक विवरण भी आर्यों से पहिले के हैं।"[१]

## विभिन्न जातियों का भारत में प्रवेश करने का क्रम

भारत के मूल अधिवासियों में निग्रो ( Negro ) सबसे पुरानी जाति है। प्रागैतिहासिक युग में ही अफ्रीका से चलकर ये अरब, ईरान और बिलोचिस्तान के समुद्री तट से होते हुए भारत में प्रविष्ट हुए। इन्हें उषः-प्रस्तर युग ( Eolithic) का माना गया है। इस जाति की विरासत दाक्षिणात्य जातियों - इरूला ( Irula ), कादिर ( Kadir ), करुम्बा ( Kurumba ) और पनियन ( Paniyan ) प्रभृति जातियों में देखी जाती है। निग्रो-रक्त का कुछ संमिश्रण असम की नागा जाति में भी दिखाई देता है, किन्तु सामान्यतया भारत के किसी भी भाग में आज निग्रो जाति का अविमिश्रित विशुद्ध मूलवंश तथा उसकी भाषा का कोई जीवित रूप नहीं है। इनका अविमिश्रित रूप और इनकी भाषा का शुद्ध स्वरूप आज न्यू गिनी और अन्दमन द्वीपों में वर्तमान है।

निग्रो के बाद पूर्व-भूमध्यसागर के फिलस्तीन से प्रोटो अस्ट्रालायड ( Proto Australoid ) जाति भारत में आई। इस आदिम जाति के वंशधर आज भी भारत में निम्न श्रेणी के लोगों में वर्तमान हैं। ऑस्ट्रिक इसी की एक अति प्राचीन शाखा थी, जिसने मेसोपोतामिया होकर भारत में प्रवेश किया। सिंहल में इनके वंशधर व्याध के नाम से विख्यात हैं। आस्ट्रेलिया के आदि निवासी भी इन्हीं के वंशधर थे। बाद में प्रागैतिहासिक काल में ही इनकी नाना शाखाएँ इन्दोचीन ( बर्मा, स्याम, कम्बोज आदि ), मलय प्रायद्वीप, द्वीपमय भारत और उसके पूर्व काले द्वीपपुञ्ज तथा बहुद्वीपपुञ्ज में फैल गई थीं। तब इनकी सभ्यता अधिक संस्कृत हो चुकी थी। ईसा के लगभग एक हजार वर्ष पूर्व के ऑष्ट्रिक जन आर्य-भाषी हो गए थे। इनके पड़ोसी द्राविड़-भाषी जनों की भी यही स्थिति थी। दक्षिणभाषी जातियों के वंशधर पंजाब से आसाम तक और सारे उत्तर भारत की जनता में अपना विलय कर आज आर्य-भाषी हिन्दू-मुसलमानों के रूप में वर्तमान हैं। इन दक्षिणजातीय जनों को आर्य लोग प्राचीन समय में निषाद कहा करते थे।

दक्षिण-भाषियों के बाद भारत में द्राविड़-भाषियों के अस्तित्व का पता चलता है। ये लगभग ३५०० ई० पू० में ही यहाँ आ चुके थे। भू-मध्यसागर की ईजियन ( Aegean ) और पश्चिम एशिया माइनर की आर्मनायड ( Armenoid ) जातियों ने आपस में विलयित होकर द्राविड़ जाति को जन्म दिया और इस

१. चाटुर्ज्या : भारत की भाषायें और भाषा संबन्धी समस्याएँ, पृष्ठ ३५–३६।

Scanned by CamScanner

विलयित रूप में ही उसने भारत में प्रवेश कर द्राविड़ नाम से अपनी ख्याति कायम की। भारत में आकर इन्होंने ही सिन्धु प्रदेश, दक्षिण पंजाब की सभ्यता का निर्माण किया। मोहन-जो-दड़ो तथा हड़प्पा से प्राप्त ध्वंसावशेषों से हमें इस सभ्यता की प्राचीनता का पता लगता है। इस सभ्यता का गौरवमय युग लगभग ३२५०–२७५० ई० पू० के बीच था। मोहन-जोदड़ो और हड़प्पा की सभ्यता के प्रतिष्ठापक ये लोग भाषा में द्राविड़ थे। ये प्रथम तो दक्षिण और पश्चिम में फैले। बाद में ये उत्तर भारत में निषादों से मिले, बाद में आर्यों से भी इनका मिलन हुआ। इस प्रकार प्राचीन भारत की हिन्दू-सभ्यता एवं संस्कृति के निर्माणकों में अनार्य, निषाद और द्राविड़ जाति की देन मुख्य है।

आर्यजन द्राविड़ों को 'दास' या 'दस्यु' के नाम से पुकारते थे। बाद में ये शब्द 'क्रीत दास' के अर्थ में प्रयुक्त हुए या 'भृत्य' या 'तस्कर' रूप में अवमानित हुए। शनैः-शनैः निषाद, द्राविड़ और आर्यों का मिलन हुआ और इन तीन जातियों ने मिलकर एक नयी जाति की नींव डाली, जो उत्तर भारत की आर्य-भाषी हिन्दू जाति के नाम से विख्यात हुई। यह बात १००० ई० पूर्व के लगभग की है।[1]

तदनन्तर आर्यों के आगमन के बाद उत्तर-पश्चिम चीन से मंगोल ( Mongol ) जाति भारत में आई। इन्हीं की एक शाखा ने होआङ् नदी के तीर पर २००० ई० पू० के लगभग चीनी सभ्यता की नींव डाली। लगभग १००० ई० पू० में पहुँचकर इसने साहित्य, लिपि, दर्शन और कला में प्रतिष्ठा प्राप्त की और इसके बाद बौद्धधर्म के चीन-प्रवेश ने इस सभ्यता को और भी आगे बढ़ाया।

इसी भोट जाति की एक दूसरी शाखा–थाई ( Thai ) जाति १००० ई० पूर्व में भारतीय धर्म, साहित्य तथा सभ्यता से अनुप्राणित होकर स्याम देश की स्यामी जाति में परिणत हो गई। उसी प्रकार भारतीय धर्म-सभ्यता से दीक्षित होकर ब्यम्मा ( Byamma ) नामक एक जाति बर्मी में परिवर्तित होकर बर्मा में बस गई। भोट जाति की एक शाखा १००० ई० पू० के आसपास तिब्बत में आकर बस गई थी और इन्हीं से सम्बन्धित कुछ जातियाँ आसाम, उत्तर-पूर्व बंगाल तथा नेपाल में बस गईं। तिब्बत में बसे हुए भोटों ने ईसा की सातवीं शताब्दी में बौद्ध-धर्म को तथा भारतीय लिपि को ग्रहण कर, तथा भारतीय साहित्य से अच्छी-अच्छी कृतियों का अनुवाद कर अपने साहित्य को समृद्ध किया। इन अनूदित कृतियों में से कुछ आज भी वहाँ हस्तलिखित पोथियों के रूप में वर्तमान हैं, जो कि संप्रति न तो अपनी मूल भाषा संस्कृत में और न ही अपनी जन्मभूमि भारत में उपलब्ध हैं।

---

१. चाटुर्ज्या : भारत की भाषाएँ और भाषा सम्बन्धी समस्याएँ, पृ० २३–२४।

Scanned by CamScanner

मंगोल जाति का उल्लेख यजुर्वेद में मिलता है। आर्यजन इन्हें 'किरात' कहा करते थे। भारत में इनका प्रवेश लगभग १००० ई० पू० में हो चुका था। हिन्दू जाति के इतिहास में और हिन्दू सभ्यता के निर्माण में मंगोल जाति का अतिशय सहयोग रहा है।[1]

हिन्दू धर्म एक व्यापक समन्वयवादी भावना का प्रतीक धर्म है। 'हिन्दू' एक जातिविशेष का पर्यायवाची शब्द न होकर उन विविध आर्य एवं अनार्य जातिसमूहों का विलयित स्वरूप है, जो जातियाँ समय-समय पर इस आर्य-भूमि में प्रविष्ट हुईं। सातवीं शताब्दी के चीनी पर्यटक ईत्सिंग का कथन है कि मध्य एशिया के लोग 'हिन्दू' शब्द को किसी जाति विशेष का अभिधान न मानकर समग्र भारतवर्ष को ही हिन्दू कहते हैं। ईत्सिंग भी इस बात का हवाला देता है कि भारत के जन-जीवन में हिन्दुत्व की भावना अपने प्राचीन रूप में एक व्यापक भावना का प्रतीक रही है। इस एक ही शब्द में भारतीय संस्कृति का अति उदार दृष्टिकोण समाविष्ट है।

विभिन्न जातियों का भारत-भूमि में प्रवेश करने का ऐतिहासिक क्रम है : निग्रो, औष्ट्रिक, द्रविड़ और सबसे अन्त में आर्य। इसके बाद भी मंगोल, युची, शक आदि अनेक जातियों का आगमन-निष्क्रमण होता गया। भारत में प्रथम प्रवेश करने वाली जाति निग्रो थी, जिसका मूल निवास अफ्रीका था और जो अरब-ईरान होकर भारत में प्रविष्ट हुई। निग्रो के बाद औष्ट्रिक, द्रविड़ और तदनन्तर आर्य भारत में आए। औष्ट्रिक ( आग्नेय ) जाति का मूल निवास यूरोप का अग्निकोण था , जो कि पूरब-पश्चिम मार्ग से भारत में प्रविष्ट हुई। 'भारतवर्ष के कोल और मुण्डा जाति के लोग, आसाम, बर्मा और हिन्दचीन की मौन-खमेर जाति, निकोबार द्वीप के निकोबरी तथा इण्डोनेशिया, मलेनेशिया और पोलीनेशिया के बहुत से काले लोग इसी औष्ट्रिक-वंश की मिश्रित संतानें हैं।[2]

संस्कार, धर्म, कर्म, भाव, विचार और रीति-रिवाज की दृष्टि से द्रविड़ों के साथ आर्य जाति की पर्याप्त समीपता थी। आर्य-संस्कृति की बहुत सी मूल बातें द्रविड़ जाति से मिलती-जुलती हैं। अतएव यही समीचीन है कि द्रविड़ों का भारत प्रवेश आर्यों से पूर्व हुआ। 'अब सभी इतिहासकार मानने लगे हैं कि द्रविड़ जाति प्राचीन विश्व की अत्यन्त सुसभ्य जाति थी और भारत में भी सभ्यता का वास्तविक आरम्भ इसी जाति ने किया।'[3] द्रविड़ों के बाद आर्य जाति ने आते ही अपने पराक्रम, कूटनीति और बुद्धि-बल के कारण औष्ट्रिक एवं द्रविड़ों को स्वायत्त

---

१. वही, पृ० १-३२।

२. दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, पृ० २४।

३. वही पृ० २७।

Scanned by CamScanner

कर लिया और धीरे-धीरे सभी जातियों के बीच एकता की भावना बढ़ती गई। मुसलमानी सल्तनत के स्थापित होने से पूर्व उक्त सभी जातियाँ हिन्दू समाज के चार वर्णों में विभाजित होकर एक ही ढाँचे में ढल चुकी थीं।

इन सभी ऐतिहासिक विवरणों को जानकर विदित होता है कि इस हिन्दू समाज के द्वारा जिस व्यापक भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ, उसमें समान रूप से उक्त सभी आर्य एवं आर्येतर जातियों का योगदान था। इस हिन्दू संस्कृति की सर्वाभिभूत भावना का इतना प्रभाव पड़ा कि पीछे से मुसलमान भी सांस्कृतिक दृष्टि से भारतीय रीति-रिवाजों में एकप्राण हो गए।। भारत की इस समन्वय-भावना को लक्ष्य कर 'दिनकर' जी ने लिखा है कि "यह विश्वजनीनता, विभिन्न जातियों को एक महाजाति के साँचे में ढालने का यह अद्भुत प्रयास और अनेक वादों, विचारों और धर्मों के बीच एकता लाने का यह निराला ढंग सभी युगों में भारतीय समाज की विशेषता रही है।[1]" सुनीति बाबू की खोजों से विदित होता है कि उक्त सभी आर्य-अनार्य जातियाँ १५०० ई० पू० के बीच एक संस्कृति और एक समाज में विलयित हो चुकी थीं। श्री शैलेन्द्रनाथ सेन गुप्त ने १९५१ ई० में पश्चिमी बंगाल की जनगणना रिपोर्ट में २०९ ऐसी जातियों का उल्लेख किया है, जो आचार-विचार और वैवाहिक जीवन में हिन्दू समाज के साथ एकप्राण हो चुकी थीं।

इसलिए आर्यों को भारतभूमि का आदि निवासी और एकाधिकारी मानना या उन्हें ही केवल हिन्दू धर्म तथा हिन्दू-संस्कृति का एकमात्र निर्माणक स्वीकार करना कदाचित् उपयुक्त न होगा। वेदों को छोड़कर संस्कृति, साहित्य और कला के क्षेत्र में जितना भी उत्तराधिकार आज भारत को उपलब्ध है, उसके निर्माण और अभ्युत्थान में अनार्य जातियों का उतना ही हाथ रहा, जितना कि आर्य जाति का।

---

१. [illegible] पृ० ३[illegible]।

Scanned by CamScanner